Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

रामदरश मिश्र के उपन्यासों में पर्व–विवेचन

डॉ0 मधु शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, नानकचन्द ऐंग्लो संस्कृत कॉलेज, मेरठ।
बबीता चौधरी
शोधछात्रा, हिन्दी विभाग, नानकचन्द ऐंग्लो संस्कृत कॉलेज, मेरठ।

सारांश– भारतीय लोक संस्कृति अपनी धर्म परायणता के लिए जानी जाती है। विभिन्न देवी– देवताओं के नाम स्मरण के लिए भारतीय समाज में अनेक पर्व उत्सव के रूप में मनाये जाते हैं। पंचाग के अनुसार इन पर्वों की संख्या बहुत अधिक है। ये पर्व भारतीय संस्कृति के महत्वपूर्ण अंग हैं, जिन्होंने भारतीय संस्कृति के अनेक संस्कारों, परम्पराओं, रीति–रिवाजों को अपने अन्तर्गत समाहित किया हुआ है।

रामदरश मिश्र जी ने अपने उपन्यासों में ग्रामीण जीवन के सजीव अंकन के लिए ग्राम्य जीवन का आधार विभिन्न प्रकार के मेलों और पर्वों का बहुतायत से वर्णन किया है, जिनमें प्रमुख रूप से रामनवमी, शिवरात्रि, नवरात्रि, नागपंचमी, बसंत पंचमी, दुर्गापूजा इत्यादि का चित्रण किया है।

मुख्य शब्द – लोक संस्कृति, पर्व, ग्राम्य–जीवन, उज्ज्वल, संरक्षक, सम्प्रदाय।

भारतीय लोक जीवन में उत्सव अनेक रूपों में सम्पन्न किये जाते हैं। **'उत्सव शब्द (उद् + सू + अप्) के संयोग से बना है। जिसके अर्थ हैं–पर्व, हर्ष या आनन्द का अवसर, मंगल समय प्रमोद–विधान इत्यादि।'**[1] इस प्रकार उत्सव से अभिप्राय है हर्ष, धूमधाम और मांगलिक कार्यों का विधान। उत्सव को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं–व्यक्ति सम्बन्धी उत्सव जैसे जन्मोत्सव व विवाहोत्सव आदि तथा धर्मिक उत्सव जैसे देवी–देवता विषयक। हमारे समाज में विभिन्न उत्सवों के अवसर पर भोज, नृत्य संगीत आदि का अयोजन भी किया जाता है। जिसमें वह अपनी पड़ोसियों, नाते–रिश्तेदारों को आमंत्रित करता है ताकि उसकी वैयक्तिक प्रसन्नता को सामूहिक उल्लास में बदला जा सके। इन उत्सवों का आयोजन व्यक्ति की आर्थिक और सामाजिक स्थिति पर निर्भर करता है। ''जिस धार्मिक समारोह में लोगों को हर्ष, आनन्द, और मनः प्रसाद की अनुभूति मिलती है, उसे उत्सव कहा जाता है।''[2]

भारतीय लोक संस्कृति अपनी धर्म परायणता के लिए जानी जाती है। विभिन्न देवी–देवताओं के नाम स्मरण के लिए भारतीय समाज में अनेक पर्व उत्सव के रूप में मनाये जाते हैं। पचांग के अनुसार इन पर्वों की संख्या बहुत अधिक है। ये पर्व भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है, जिसने भारतीय संस्कृति के अनेक संस्कारों, परम्पराओं रीति–रिवाजों को अपने अंदर समाहित किया हुआ है।

रामदरश मिश्र जी ने अपने उपन्यासों में रामनवमी, शिवरात्रि व नवरात्रि, नागपंचमी, बसंत पंचमी, दुर्गा पूजा आदि अनेक पर्वों का चित्रण किया है।

फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को महाशिव रात्रि का पर्व मनाया जाता है। 'इस दिन नर नारी व्रत रखकर फलाहार ग्रहण करते हैं' 'प्रानी के प्राचीर' उपन्यास में शिवरात्रि का पर्वोत्सव बड़े उल्लास

के साथ मनाया जाता है। शिवरात्रि के दिन गाँव की लड़कियाँ महादेव जी की पूजा करती हैं। सब आपस में चुहल करती हैं–''अरी माँग ले रे माँग ले, बम भोले से अच्छा सा दुलहा। औघड़ दानी हैं महादेव जो, मन–चित्त लगाकर इन्हें पूजती है उसे ये जरूर रंगीला सा दूलहा देते हैं। . . . और सभी लड़कियाँ बेल पत्र, अक्षत और फूल इन पर डालकर मन ही मन दूहला ओर अहिवात मांगती थीं।''[3]

इसी भांति 'दूसरा घर' उपन्यास में भी शिवरात्रि का पर्वोत्सव धूम–धाम से मनाया जाता है। औरतों के झुण्ड के झुण्ड चौताल गाती हुई शिव मंदिर की ओर प्रस्थान कर रही हैं–''पूजह शिव को बहुभांती आजु शिवरात्रि।''[4]

नाग पंचमी का उत्सव सावन मास में मनाया जाता है। इस दिन लड़कियाँ कजली गाती, मेंहदी रचाती और शाम को पुतलियाँ नदी नाले में फेंकने जाती हैं जबकि लड़के चिक्का–कबड्डी खेलते, कुश्ती लड़ते और पुतलियों को डंडों से पीटते हैं। नागपंचमी का वर्णन 'थकी हुई सुबह' उपन्यास में दखाई देता है–''उल्लास की सीमा नहीं रहती थी। अपने फटे–पुराने कपड़े की धानी रंग कर हम नयी हो उठती थी। पाँवों में मेहंदी लगातीं थी।''[5]

'बचपन भास्कर का' उपन्यास में नागपंचमी के अवसर पर ''पलाश के डंडे बनाये जाते थे। रंगे जाते थे। लेकर हम लोग निकल पड़ते थे भगने नाले के पास के खाली खेतों में। वहाँ चिक्का होता था कुश्ती होती थी और जब लड़कियाँ गाती–बजाती हुई, पुतलियाँ लेकर आती थीं और उन्हें नाले में फेंकती थीं तब हम डंडो से उन पुतलियों को पीटते थे और लड़कियों द्वारा लाये गये भीगे चने या मटर उनसे माँग–माँगकर खाते थे। फिर शाम को बड़की बारी में झूले पड़ जाते थे और लड़कियाँ गाती–बजाती हुई झूला झूलती थीं।''[6]

'जल टूटता हुआ' उपन्यास में भी नागपंचमी के पर्वोत्सव का बहुत सजीव चित्रण हुआ है–''लोगों के हाथों में लगाने के लिए भाटपार के माली के यहाँ से मेहंदी खरीदी। शाम को लड़के–लड़कियाँ थोड़ी–थोड़ी मेहंदी हथेलियों पर चिपकाए नाच नाचकर गाते रहे।''

''अतलवा क पनिया पतलवा जा

हमार मेहदिया झुरा जा''[7]

'थकी हुई सुबह' उपन्यास में 'बसंत पंचमी' के पर्वोत्सव का उल्लेख हुआ है। इस पर्वोत्सव पर पीले रंग के वस्त्र पहनने का महत्व है। इस दिन ऐसा लगता है मानो प्रकृति भी पीले रंग से रंगी हो–''खेतों ने सरसों के पीले फूलों के वस्त्र पहन रखे हैं, आकाश भी उस रंग में रंगा हुआ है। गाँव की औरतें अपनी सही–सलामत या फटी पुरानी साड़ियों को पीले रंग में रंगकर पहने हुई हैं। केवल सुंदर दूबे की बेटी कलावती ने नयी पीली साड़ी पहन रखी है।''[8]

'दूसरा घर' उपन्यास में गुजरात के नवरात्रि पर्वोत्सव का चित्रण किया गया है नवरात्रि पर नौ दिन तक उपवास रखकर देवी दुर्गा की पूजा की जाती है। गुजरात में इन दिनों घरों के आगे अल्पना पूरी जाती है और गरबा नृत्य किया जाता है। स्त्रियाँ अपने जूड़े में फूलों के गजरे लगाती हैं तथा नयी–नयी साड़ियाँ पहनती हैं। उनके नृत्य के एक झलक देखिए–''अनेक स्त्रियाँ एक सामूहिक लय में उठती गिरती वर्तुलाकार चक्कर काट रहीं थीं। जो भी आ रहा था उसमें शामिल होता जा रहा था। पुरुष भी शामिल हो रहे थे। गीत का कोई बोल उठ रहा था–**खम्मा म्हारा नंदजी नो लाल बसिया काहे को बगाड़ो।''**[9]

'पानी के प्राचीर' में भी नवरात्रि का पर्वोत्सव मनाया जा रहा है। नवरात्रि की आखिरी रात है। डिम–डिमाहट के सारी रात उनींदी हो रही है। रात का पिछला पहर गीत से थरथरा रहा है।

निदिया के उरिया मइया झूलेली हिंडोलवा

कि झूलि झूलि ना

मइयो मोरि गावेली गीतिया कि

झूलि झूलि ना।''[10]

'जल टूटता हुआ' में दशहरे का पर्वोत्सव मनाया जा रहा है। दशहरे का उत्सव अश्विन मास के शुक्ल पक्ष की दसवीं तिथि को मनाया जाता है। इस दिन रावण दहन और रामलीला का आयोजन किया जाताहै। **''लड़के आज सुबह से ही खुश हैं। बच्चे नीलंकठ देखते ही उसके पीछे–पीछे दौड़ पड़ते हैं–**

नीलकंठ निलबारी बारी,

सिता से कहिह भेंट अकवारी,

हमार नाव किसुनमुरारी।''[11]

'जल टूटता हुआ' उपन्यास में ही एक और पर्व का चित्रण हुआ है, वह पर्व है भारत का सबसे बड़ा राष्ट्रीय पर्व, स्वतन्त्रता दिवस। परन्तु गरीबी और अभावों से जूझते गरीब बच्चों के लिए यह दिन थोड़ी सी मिठाई और लड्डू खाने का है। उन्हें स्वतन्त्रता दिवस से कोई सरोकार नहीं है–''लड्डू खा खाकर लड़के घर की ओर भागे। मास्टर सुग्गन तिवारी अपने अगोछे में दो–तीन सेर लड्डू बांधकर टूटा छाता लिये बाहर निकले, तो पानी से लथपथ भारतीय ध्वज बाँस पर टँगा हुआ उन्हें दिखाई पड़ा। उन्हें एकाएक होश आया कि अरे जन–गन–मन तो हुआ ही नहीं। उन्होंने चाहा कि एक बार जोर से लड़कों को पुकारें कि जन–गन–मन गाकर जाओं, किन्तु सभी लड़के भागते हुए घरों की ओर जा रहे थे।''[12]

भारतीय समाज में त्यौहारों का व्यापक महत्व है। त्यौहरों के मूल में धार्मिक भावना निहित होती है। जिन्हें व्यक्ति अपने उज्ज्वल भविष्य की कामना एवं सुख–समृद्धि के लिए मनाता है। हमारे लोक जीवन में त्यौहारों की संख्या बहुत अधिक है। प्रायः प्रत्येक माह कोई न कोई छोटा–बड़ा त्यौहार अवश्य होता है। इन त्यौहारों पर अक्सर परिवारों में पकवान मिठाई आदि का आदान–प्रदान किया जाता है। ये त्यौहार ग्रामीण जनता के जीवन में नवीन शक्ति एवं उत्साह का संचार करते हैं। ''उत्सव ऐक्य के साधक, प्रेम के पोषक, प्रसन्नता के प्रेरक, धर्म के संरक्षक और भाव के संवर्धक हैं।''[13]

रामदरश मिश्र जी के उपन्यासों में ग्राम्य–जीवन में प्रचलित विविध त्यौहारों का बहुत ही जीवन्त वर्णन मिलता है। जोकि लेखक की सफल वर्णन–क्षमता का द्योतक है।

'जल टूटता हुआ' उपन्यास में ग्रामीण जीवन की होली का एक दृश्य देखिए–''जमुना भौजी ने अपने घर के पास से गुजरते हुए दलसिंगार को ललकार देकर रंग दे मारा और तभी दलसिंगार जमुना भौजी के नाम पर कबीर गाने लगा। तभी महावीर को खदेड़ते हुए कुछ लड़के आ रहे हैं। मउगा दलसिंगार रंग से भीगा हुआ है और वह मास्टर सुग्गन की औरत जमुना के नाम पर कबीर गाता हुआ महावीर के पीछे–पीछे दौड़ रहा है। दलसिंगार हाथ में गोबर लेकर महावीर पर डालने के लिए उसके पीछे दौड़ रहा है। कुछ लड़के हल्ला–गुल्ला करते हुए उसका साथ दे रहे हैं।''[14]

'दूसरा घर' उपन्यास में भी महानगरीय होली का चित्रण हुआ है। होली का हुड़दंग मचा हुआ है। हर कोई रंग में सराबोर है। लोग एक दूसरे को ललकार कर खदेड़ रहे हैं तथा नारेबाजी कर रहें हैं–उड़ा ले चलो पंछी है। होली पर कोई गा रहा है–**''बुरा न मानो होली है भाई होली है।''**[15]

'बीस बरस' उपन्यास में होली के रंग कुछ बदले हुए हैं परन्तु परम्परा निभाने के लिए होली मनायी जा रही है। नायक दामोदर के प्रयासों से होली की पुरानी परम्पराएँ फिर से शुरू होती है और गाँव की जनता फिर से उस पुरानी होली को जी उठती है। नगाड़े के साथ फिर से चौताल गायन शुरू होता है जो लगभग तीन घंटे तक चलता है। ढ़ोल और झाल के साथ गाँव की परिक्रमा करते हुए लोग गाते हैं– **''सदा आनद रहे एहि द्वारे, जिये से खेले फाग हो।''**[16] रास्तें में उन लोगों पर जगह–जगह पानी और कीचड़ की बौछार भी की जाती है।

'जल टूटता हुआ' उपन्यास में दशहरे का त्यौहार मनाया जा रहा है। इस दिन रावण दहन और रामलीला का मंचन किया जाता है। छोटे–छोटे बच्चे और युवा सभी हो इस दिन का बहुत चाव से इंतजार है– ''लड़के आज सुबह से ही खुश हैं, बच्चे नीलकंठ देखते ही उसके पीछे–पीछे दौड़ पड़ते हैं–

''नीलकंठ निलबारी बारी

सिता से कहिह भेंट अकवारी,

हमार नाव किसुनमुरारी।।''[17]

अन्य त्यौहारों के साथ ही दीपावली के अवसर पर जो रौनक होती हैं, उसका भी मनोहर चित्रण मिश्र जी ने किया है। दीपावली के अवसर पर अच्छे–अच्छे पकवान बनते हैं, वही पूरे वातावरण में जगमगाहट के कारण उसका सौन्दर्य और भी निखर आता है। घरों की सजावट, लक्ष्मी की पूजा, मिट्टी के दीयों में माँ और भाभी के हाथों तेल–बाती की स्थापना, फिर एक दीये का जलना,एक से दूसरे, दूसरे से तीसरे और इसी तरह अनंत दीयों का जलना तथा अमावस्या की रात में उनका जगमगाना क्या दृश्य होता था– ''कितना अच्छा लगता था कि मैं भाई–बहन के साथ दीयों को यहाँ–वहाँ रख रहा होता था। अंधकार कहीं छिपने न पाये इसलिए घर के कोने में, देहरी पर, कुएँ पर, खेत में, देवताओं के थानों पर हम दीये रख आते थे। पूरा परिवेश जग–मगर करने लगता था। लगता था जैसे ज्योति गुनगुना रही हो।''[18]

उसके साथ ही भईया दूज और गोवर्धन पूजा के त्यौहार पड़ते थे क्योंकि इन दोनों त्यौहारों को दीपावली के साथ ही मनाया जाता है। इसका वर्णन भी मिश्र जी के उपन्यासों में मिलता है–''उस दिन बैलों का भी श्रृंगार किया जाता था। नाँद पर ही उनके गोबर में कोहड़े का फूल सजाया जाता था। दस बजे के आसपास एक खाली मैदान में गोबर से गोवर्धन की मूर्ति बनायी जाती थी। औरतें वहाँ एकत्र होती थीं।''[19]

इस विवेचन से स्पष्ट होता है कि रामदरश मिश्र जी ने ग्रामीण जीवन के सजीव अंकन के लिए ग्राम्य जीवन का आधार विभिन्न प्रकार के मेलों, उत्सव, पर्व, त्यौहारों का बहुतायात से वर्णन किया है साथ ही आधुनिकता के परिणामस्वरूप हो रहे परिवर्तनों का भी सफल चित्रण किया है। ''यांत्रिकता, स्वार्थ, महँगाई, बेरोजगारी, आदि विभिन्न सामाजिक विसंगतियों ने त्यौहारों की चहल–पहल को ही लूट लिया है। ग्राम्य–जीवन के धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन का यह प्रामाणिक यथार्थ है कि त्यौहार मात्र नाम के लिए ही रह गए हैं।''[20]

ग्राम्य–जीवन में मेलों का आयोजन, सांस्कृतिक परम्परा का परिचायक है। मेले भारतीय समाज में मनोरंजन का एक विशेष साधन हैं। मेले का आयोजन या तो किसी विशेष त्यौहार के अवसर पर या अन्य

सांस्कृतिक महत्व के दिन किया जाता है। ग्रामीण जनता के लिए ये मेलें सामूहिक उत्सव, बाजार, प्रदर्शनी त्यौहार आदि सब कुछ होते हैं। इन मेलों में आस–पास के गाँवों की जनता अत्यन्त हर्ष एवं उल्लास के साथ भाग लेती है, परन्तु आज ग्रामीण परिवेश में इन मेलों का महत्व कम होता जा रहा है, अब ये मेले पारस्परिक मिलन स्थल के स्थान पर गुंडागर्दी के केन्द्र बनते जा रहे हैं। रामदरश मिश्र ने 'पानी के प्राचीर', 'जल टूटता हुआ' और 'थकी हुई सुबह' उपन्यासों में ग्राम्य जीवन के मेलों के बड़े ही पारदर्शी चित्र उकेरे हैं–

'थकी हुई सुबह' उपन्यास में ''नवरात्रि के दिनों में देवी के थान पर मेला लगता है रंग–बिरंगे कपड़ों में सज्जित झुंड–की–झुंड औरतें, बच्चे, मर्द देवी के थान की ओर चले जा रहे थे। इस मेले में औरतें गीत गा रही थीं। रास्ते गहमागहमी से भरे थे। मेले में गहमागहमी शुरू हो गयी थी। चारों ओर हरिजनों की नृत्य मंडली सक्रिय हो उठी थी। मृदंग, झाँझ, हुडुक्क और घुँघरू की सम्मिलित ध्वनियाँ एक लय से यहाँ–वहाँ बज रहीं थीं। देवी को चढ़ाने के लिए यहाँ–वहाँ पूड़ियाँ छानी जा रही थीं। मेले में तरह–तरह की दुकानें लगती हैं। मेले में दस–पन्द्रह दिन तक रात दिन रौनक रहती है।''[21]

'जल टूटता हुआ' उपन्यास में तिवारीपुर के दशहरे के मेले का चित्रण हुआ है। आसपास के गाँवों के लोग उत्साहपूर्वक इस मेले में सम्मिलित होते हैं। परन्तु मेले में शहरी सभ्यता का असर पड़ने लगा है। मेले की भीड़ में भी प्रत्येक व्यक्ति अकेलापन अनुभव करता है। सतीश गाँव के परिवर्तित मेले के स्वरूप को बताता हुआ कहता है– ''अब मेले का वह जोर नहीं रहा जो पहले था। यही वह मेला है जो अपनी भीड़ और वैभव के लिए दूर–दूर तक विख्यात था। अब पूरे मेले में भीड़ के बीच एक अजब बिखराव दिखता है राम, लक्ष्मण, रावण के ठाठ–बाट की जगह एक दरिद्र सूनापन दौड़ रहा है। मेले में तरह–तरह के लोग आज भी हैं किन्तु अलग–अलग बंटे हुए। गाँव के लड़के शहर में पढ़ते हैं वे मेले में आते हैं एक अजनबी की तरह, मानों वे गाँव वालों से सम्मान पाने के लिए अपने को भीड़ में से अलगाये खड़े रहते हैं।''[22]

'पानी के प्राचीर' उपन्यास में काली माई के मेले का वर्णन किया गया है, जिसमें लोग अपने अभावों और गरीबी को भूलकर प्रसन्नतापूर्वक शामिल होते हैं। मेले का चित्रण द्रष्टव्य है–''गाँव के दक्खिन में एक बड़ा सा ताल है, जहाँ काली माई का मंदिर है, वहीं दशहरे के उपलक्ष में एक विराट मेला लगता है। पास–पड़ोस के जर–जवार के अनेक गाँवों से लोग देवी के दर्शन के लिए तथा अपना टोना–टोटका, भूत–प्रेत उतरवाने आते हैं। मेला शुरू हो गया है देवी की ड्योढ़ी पर नगाड़ा बज रहा है। सोखा साहब (रामधन तेली) आँखें मूँदे हुए हाथ में लंवग लेकर ध्यानावस्थित है। केले की लाल साड़ियाँ पहने, लाल–लाल टोपी लगाए, जुलहरी अंगोछे तथा लाल कुरतों से लिपटे हुए बच्चों को गोद में लिए कजरौटा लटकाए ये ग्राम देव–देवियाँ झुण्ड की झुण्ड अपने पाप–ताप के शमन के लिए आ रही हैं।''[23]

मेले से गुजरते हुए लक्ष्मी अनुभव करती है– ''न जाने क्या है इस लोक भूमि और लोक संस्कृति में कि लोग अपने–अपने कष्ट भूलकर एक सामूहिक उल्लास से हिल्लोलित हो उठते हैं। इसकी संजीवनी छुअन से उनके उदास टूटे हुए मनों में एक नयी सुबह जाग पड़ती है।''

भारत–गँवई संस्कृति में मेले का अनन्य महत्व है। विविध जाति, धर्म और सम्प्रदाय के लोग उन्हें अपनी मान्यताओं और परम्पराओं के अनुरूप इनका आयोजन धूमधाम से करते हैं जिसके पीछे उनकी धार्मिक और सांस्कृतिक भावना निहित रही है। रामदरश मिश्र जी ने अपने उपन्यसों में ग्रामीण संस्कृति के मेलों के द्वारा लोगों के उत्साह आदि के चित्रण के साथ–साथ वर्तमान समय में हो रहे सामाजिक बदलाव और लोगों में मेलों के प्रति बढ़ती उदासीनता को भी उकेरने में सफलता प्राप्त की है।

सन्दर्भ –

1. वामन शिवराम आप्टे–संस्कृत–हिन्दी कोश पृष्ठ सं0 190
2. सं० महादेव शास्त्री जोशी–मुलांचा संस्कृति कोश–प्रथम खण्ड, पृष्ठ संख्या–185
3. रामदरश मिश्र–पानी के प्राचीर, पृष्ठ संख्या–167
4. रामदरश मिश्र–दूसरा घर, पृष्ठ संख्या–166
5. रामदरश मिश्र–थकी हुई सुबह, पृष्ठ संख्या–12
6. रामदरश मिश्र–बचपन भास्कर का, पृष्ठ संख्या–25
7. रामदरश मिश्र–जल टूटता हुआ, पृष्ठ संख्या–31
8. रामदश मिश्र–थकी हुई सुबह, पृष्ठ संख्या–28
9. रादरश मिश्र–दूसरा घर, पृष्ठ संख्या–97
10. रामदरश मिश्र–पानी के प्राचीर, पृष्ठ संख्या–37
11. रामदरश मिश्र–जल टूटता हुआ, पृष्ठ संख्या–119
12. वही, पृष्ठ संख्या–11
13. ममता शर्मा–रामदरश मिश्र के उपन्यासों में ग्राम्य चेतना, पृष्ठ संख्या–137
14. रामदरश मिश्र–जल टूटता हुआ, पृष्ठ संख्या–341
15. रामदरश मिश्र–दूसरा घर, पृष्ठ संख्या–225–226
16. रामदरश मिश्र–बीस बरस, पृष्ठ संख्या–27
17. रामदरश मिश्र–जल टूटता हुआ, पृष्ठ संख्या–119
18. रामदरश मिश्र, बचपन भास्कर का, पृष्ठ संख्या–34
19. वही, पृष्ठ संख्या–35
20. डॉ० ममता शर्मा–रामदरश मिश्र के उपन्यासों में ग्राम चेतना, पृष्ठ संख्या–216
21. रामदरश मिश्र–थकी हुई सुबह, पृष्ठ संख्या–78
22. रामदरश मिश्र–जल टूटता हुआ, पृष्ठ संख्या–121–122
23. रामदरश मिश्र–पानी के प्राचीर, पृष्ठ संख्या–38